राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

खंडपीठ सिविल रिट याचिका 15154/2019

डॉ. आशीष गर्ग पुत्र रमेश चंद गर्ग, उम्र लगभग 52 वर्ष, निवासी प्लॉट नंबर 9, शिवानी डीजे के सामने, मोदी रोड, फौज का मोहल्ला, झुंझुनू-333001.

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. राजस्थान सरकार को सचिव, उच्च शिक्षा विभाग, सचिवालय भवन, स्टेच्यू सर्कल के पास, जयपुर के माध्यम से ।
2. आयुक्त कॉलेज शिक्षा, ब्लॉक-IV, डॉ.एस.राधाकृष्णन शिक्षा संकुल, जवाहर लाल नेहरू मार्ग, जयपुर-302015।
3. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 इसके अध्यक्ष के माध्यम से।
4. प्रबंध समिति, सेठ मोतीलाल पी.जी. कॉलेज, रानी सती मंदिर के पास, झुंझुनू, राजस्थान सचिव श्री जी.एल.शर्मा के माध्यम से।

----प्रत्यर्थीगण

याचिकाकर्ता (गण) की ओर से : श्री विवेक दांगी, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी (गण) की ओर से : श्री प्रखर गुप्ता, अधिवक्ता एवं
सुश्री चार्वी पाटनी, अधिवक्ता,
डॉ. वी.बी.शर्मा, एएजी की ओर से।
श्री नीरज बत्रा, नंबर 3-यूजीसी के अधिवक्ता

माननीय न्यायमूर्ति अशोक कुमार गौड़

माननीय न्यायमूर्ति आशुतोष कुमार

<u>निर्णय</u>

<u>रिपोर्टेबल</u>

निर्णय सुरक्षित करने की तिथि : 16 फ़रवरी, 2023

निर्णय उच्चारित करने की तिथि : 30 मई, 2023

न्यायालय द्वारा:

1. याचिकाकर्ता द्वारा तत्काल रिट याचिका दायर की गई है जिसके माध्यम से राजस्थान स्वैच्छिक ग्रामीण शिक्षा सेवा नियम, 2010 (इसके बाद इसे "**2010 के आरवीआरईएस नियम**" के रूप में संदर्भित किया जाएगा) के नियम 5 (iv) के क्रियान्वयन को चुनौती दी गई है।

2. याचिकाकर्ता की रिट याचिका में की गई परिणामी प्रार्थनाएँ इस प्रकार हैं:-

(i) याचिकाकर्ता को दिनांक 01.04.2007 से चयन वेतनमान और 01.04.2002 से वरिष्ठ वेतनमान प्रदान करते हुए उसके वेतन में संशोधन बारे में दिनांक 21.02.2011 के आदेश को रद्द करना और आपास्त करना;

(ii) गैर-सरकारी सहायताप्राप्त शिक्षण संस्थान में गैर-सहायताप्राप्त पद पर याचिकाकर्ता द्वारा की गई सेवा की अवधि को ध्यान में रखते हुए याचिकाकर्ता को 19.01.1998 और 13.01.2003 से क्रमशः वरिष्ठ और चयन वेतनमान के लाभ का हकदार घोषित करना;

(iii) याचिकाकर्ता द्वारा वरिष्ठ और चयन वेतनमान के लिए गैर-सहायताप्राप्त पद पर प्रदान की गई सेवाओं पर विचार करते हुए छठे वेतन आयोग की सिफारिशों का लाभ बढ़ाकर याचिकाकर्ता को बकाया वेतन का भुगतान करने का प्रत्यर्थी संख्या 3 और 4 को निर्देश देना।

3. वर्तमान याचिका के तथ्य, संक्षेप में, यह हैं कि याचिकाकर्ता को प्रारंभ में 19.01.1993 को सेठ मोतीलाल पीजी कॉलेज, झुंझुनू में रसायनविज्ञान विषय में व्याख्याता के पद पर नियुक्त किया गया था, जो एक गैर-सरकारी सहायताप्राप्त शैक्षणिक संस्थान है। याचिकाकर्ता की सेवाएं दिनांक 19.01.1995 से पुष्ट कर दी गई थीं।

4. जिस संस्थान में याचिकाकर्ता काम कर रहा था, वह राजस्थान गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थान अधिनियम, 1989 (इसके बाद इसे "**1989 का अधिनियम**" के रूप में संदर्भित किया जाएगा) और उसके तहत बनाए गए नियम अर्थात राजस्थान गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थान (मान्यता, सहायता अनुदान और सेवा शर्तें, आदि) नियम, 1993 (इसके बाद "**1993 के नियम**" के रूप में संदर्भित किए जाएंगे) के अंतर्गत राज्य सरकार से अनुदान सहायता प्राप्त कर रहा था तथा उसे रसायनविज्ञान में व्याख्याता के पद 01.04.1998 से

विधिवत संस्वीकृत किया गया था।

5. याचिकाकर्ता ने दलील दी है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (संक्षेप में "**यूजीसी**") ने कैरियर उन्नति योजना (संक्षेप में "**सीएएस**") शुरू की और इस प्रकार, याचिकाकर्ता को राज्य सरकार के नामित व्यक्ति सहित विधिवत गठित स्क्रीनिंग कमेटी द्वारा चयन के बाद 19.01.1998 से वरिष्ठ स्केल का लाभ दिया गया। ।

6. याचिकाकर्ता ने दलील दी है कि 19.01.1998 से वरिष्ठ वेतनमान में रसायन विज्ञान में व्याख्याता के रूप में पांच साल तक सेवा करने के बाद, उन्हें 19.01.2003 को पुनः राज्य सरकार द्वारा नामित विधिवत गठित स्क्रीनिंग कमेटी द्वारा ।19.01.1998 से चयन वेतनमान का लाभ दिया गया था।

7. याचिकाकर्ता ने दलील दी है कि राज्य सरकार ने राजस्थान स्वैच्छिक ग्रामीण शिक्षा सेवा नियम, 2010 नाम से एक नई सेवा बनाई थी और याचिकाकर्ता ने सरकारी संस्थान में सेवाओं में शामिल होने का विकल्प चुना था और उसने विकल्प फॉर्म भरा और वह 2010 के आरवीआरईएस नियमों के तहत 29.07.2011 को सरकारी सेवा में शामिल हो गया और याचिकाकर्ता को 30.07.2011 को कार्यमुक्त कर दिया गया तथा उसने गैर-सरकारी सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थान-प्रत्यर्थी संख्या 4 से कार्यमुक्त होने के बाद आवंटित कॉलेज में कार्यभार ग्रहण कर लिया।

8. याचिकाकर्ता ने दलील दी है कि दिनांक 21.02.2011 के आदेश के तहत याचिकाकर्ता का वेतन 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5 (iV) के अनुसार संशोधित किया गया था, जिसमें उनके द्वारा प्रदान की गई सेवाओं को केवल 01.04.1998 से गिना गया था और उनकी पूर्व की सेवाओं अर्थात 19.01.1993 से 31.03.1998 तक की सेवाओं को नजरअंदाज करते हुए 19.01.2003 के स्थान पर 01.04.2007 से चयन वेतनमान देने पर विचार करते हुए याचिकाकर्ता का वेतन भी संशोधित किया गया।

9. याचिकाकर्ता, दिनांक 21.02.2011 के आदेश जारी होने, जिसमें उसके वेतन को वरिष्ठ वेतनमान और चयन वेतनमान में संशोधित किया गया है और साथ ही 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5(iV) द्वारा और से व्यथित महसूस कर रहा है, तथा उसने 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5(iV) के स्पष्टतः उल्लंघन और वर्तमान याचिका में उल्लिखित परिणामी आदेशों को वर्तमान याचिका में उठाया है।

10. प्रत्यर्थी-राज्य ने रिट याचिका का जवाब दायर किया है और प्रारंभिक प्रस्तुतीकरण में, यह तर्क दिया गया है कि दिनांक 21.02.2011 का आदेश प्रत्यर्थी-4 सेठ मोतीलाल पीजी कॉलेज, झुंझुनू (गैर-सरकारी सहायता प्राप्त शिक्षण संस्थान) द्वारा यूजीसी की सीएएस योजना के तहत वरिष्ठ और चयन वेतनमान में पात्र व्याख्याताओं की उचित नियुक्ति के लिए स्क्रीनिंग कमेटी की बैठक आयोजित करने के उपरांत जारी किया गया था और सरकार की नई नीति के कारण पहले प्रदान की गई अस्थायी सेवाओं की अनदेखी करते हुए वेतन निर्धारण में संशोधन किया गया था और इस प्रकार याचिकाकर्ता को नियमित आधार पर वरिष्ठ वेतनमान में 01.04.2002 से एवं चयन वेतनमान में 01.04.2007 से नियत कर दिया गया था।

11. प्रत्यर्थी-राज्य ने आगे दलील दी है कि 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5 (iv) की संवैधानिक वैधता को, समान तथ्यों के साथ **प्रेम प्रकाश पुरोहित बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य नामक खंडपीठ सिविल रिट याचिका संख्या** 61/2013 तथा **श्रीमती संतोष रांका एवं अन्य बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य नामक खंडपीठ सिविल रिट याचिका संख्या** 62/2013 में चुनौती दी गई थी और इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5 के उप-नियम (iv) की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखते हुए उक्त याचिकाओं को खारिज कर दिया।

12. प्रत्यर्थी-राज्य ने दावा किया है कि चूंकि याचिकाकर्ता 01.04.1998 से स्वीकृत पद के विरुद्ध काम कर रहा था, इसलिए उसे सीएएस का तदनुसार लाभ दिया गया था। प्रत्यर्थी-राज्य ने यह भी आपत्ति की है कि स्क्रीनिंग कमेटी ने याचिकाकर्ता के वरिष्ठ और चयन वेतनमान को संशोधित किया है, जिसे प्रत्यर्थी नंबर 4 द्वारा 2010 के आरवीआरईएस नियमों के अनुसार दिया गया है और याचिकाकर्ता बहुत बाद में सरकारी सेवा में शामिल हुआ और ऐसे में, नियुक्ति-पूर्व सेवाओं के लिए अर्थात सरकारी सेवा में आने से पहले, याचिकाकर्ता को आरवीआरईएस नियम 2010 के प्रावधानों को चुनौती देने से रोका जाता है।

13. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री विवेक दांगी ने निम्नलिखित दलीलें दीं:-

13क. 2010 के आरवीआरईएस नियमों का नियम 5(iv) सीएएस लाभ देने के लिए यूजीसी योजना के विपरीत है, क्योंकि यूजीसी वेतनमान नियम कहीं भी यह प्रावधान नहीं करते हैं कि जिस पद पर कर्मचारी काम कर रहा है उसे पूर्ववर्ती 1989 के अधिनियम

और 1993 के नियमों के प्रावधान के तहत स्वीकृत और सहायताप्राप्त पद होना चाहिए। याचिकाकर्ता, यदि अन्य सभी पात्रता मानदंड, जैसे न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता और प्रदान की गई सेवा के अपेक्षित वर्षों को पूरा करता है, तो वह इस तथ्य के बावजूद सीएएस के लाभों का हकदार है कि वह पद, जिस पर वह काम कर रहा है, स्वीकृत है या नहीं। यूजीसी वेतनमान देने की योजना राज्य सरकार द्वारा सहायताप्राप्त संस्थानों को दी जाने वाली अनुदान सहायता से पूरी तरह से अलग है, क्योंकि अनुदान सहायता संस्थान द्वारा एक वित्तीय वर्ष किए गए कुल अनुमोदित व्यय के एक निश्चित प्रतिशत के रूप में प्रदान की जाती है। तथापि, यूजीसी वेतनमान का लाभ सुनिश्चित कैरियर प्रगति (संक्षेप में "**एसीपी**") की एक विशेष योजना के तहत दिया जाता है।

13ख. 2010 के आरवीआरईएस नियमों का नियम 5(iv) भेदभावपूर्ण है और इसलिए, भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के आदेश का उल्लंघन है। 2010 के आरवीआरईएस नियमों का नियम 5(iv) गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थानों के उन कर्मचारियों पर लागू होता है जो सरकारी सेवा में शामिल हो गए हैं, न कि उन लोगों पर जो अपने संबंधित गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थानों के साथ काम करना जारी रखते हैं और इस प्रकार, इसने समान स्थिति वाले व्यक्तियों के बीच एक अनुचित और गैर-औचित्यपूर्ण द्वंद्व पैदा किया है।

13ग. 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5 (iv) का प्रख्यापन, यूजीसी वेतनमान के अनुदान के लिए पात्रता निर्धारित करने की सीमा तक, यूजीसी कैरियर एडवांसमेंट स्कीम के तहत प्रदान की गई सीमा से परे, राज्य सरकार की विधायी क्षमता से परे है।

13घ. हालाँकि, सीएएस के लाभों का अधिकार के रूप में दावा नहीं किया जाता है, तथापि, एक बार जब ऐसे लाभ प्रचलित कानून के प्रावधानों के तहत विधिवत स्वीकृत हो जाते हैं, तो उन्हें पूर्वव्यापी आधार पर मनमाने ढंग से अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।

13ङ. याचिकाकर्ता गैर-सरकारी सहायता प्राप्त शिक्षा संस्थान का कर्मचारी है और उसे पद गैर-सहायता प्राप्त होने के बावजूद यूजीसी वेतनमान में वेतन प्राप्त करने का अधिकार है, जिसे 1993 के नियमों के नियम 2 (ग) में संलग्न स्पष्टीकरण के अनुसार शासित

किया जाना आवश्यक है तथा सहायताप्राप्त संस्थान में काम करने वाले किसी भी कर्मचारी को यूजीसी वेतनमान का लाभ दिया जाना आवश्यक है, भले ही कोई विशेष पद स्वीकृत न हो और सहायता अनुदान प्राप्त भी न कर रहा हो।

13च. 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5(iv) को चुनौती देने के याचिकाकर्ता के अधिकार से संबंधित आपत्ति और इस न्यायालय द्वारा पहले उक्त नियम की वैधता को बरकरार रखे जाने के कारण उसे चुनौती देने से रोका जाना एक बाध्यकारी मिसाल नहीं होगी।

प्रेम प्रकाश पुरोहित (सुप्रा.) के मामले में खंडपीठ द्वारा पारित पूर्व आदेश की इस आधार पर आलोचना नहीं की गई थी कि उक्त नियम मनमाने ढंग से और अवैध रूप से यूजीसी कैरियर एडवांसमेंट स्कीम के तहत गैर-सरकारी सहायताप्राप्त शिक्षण संस्थान के कर्मचारियों को उनके पद स्वीकृत और सहायताप्राप्त होने से पूर्व की अवधि के लिए वेतनमान (वरिष्ठ और चयन) के संशोधन के लाभ से इनकार करता है और इस तरह का तर्क न तो किसी पक्ष द्वारा उठाया गया था और न ही उच्च न्यायालय द्वारा इस पर कोई विचार, चर्चा या निष्कर्ष दिया गया और इस प्रकार, उक्त निर्णय एक ही मुद्दे पर एक प्राधिकारी/बाध्यकारी मिसाल के रूप में नहीं माना जा सकता है और इस तरह उक्त निर्णय ***चुपचाप*** पारित किया जाता है और उक्त नियम मिसाल के नियम का अपवाद है।

13छ. प्रत्यर्थी-राज्य की आपत्ति है कि चूंकि याचिकाकर्ता ने 2010 के आरवीआरईएस नियम के नियम 5 (xi) के तहत एक वचन दिया है, इसलिए उसे 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5 (iv) की वैधता पर प्रश्न उठाने से रोका गया है, यह पूरी तरह से गलत धारणा है क्योंकि भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 19(1)(छ) के तहत याचिकाकर्ता को दिए गए मौलिक अधिकारों पर कोई रोक नहीं हो सकती है।

13ज. दिनांक 21.02.2011 के आक्षेपित आदेश को चुनौती देने में देरी और ढिलाई के आधार पर रिट याचिका की विचारणीयता के संबंध में प्रत्यर्थी-राज्य द्वारा उठाई गई आपत्ति गलत है क्योंकि पूर्वव्यापी प्रभाव से वरिष्ठ और चयन वेतनमान के सीएएस लाभों को वापस लेना, पूर्वाग्रहपूर्ण रूप से याचिकाकर्ता को उसकी सेवा के पूरे कार्यकाल के दौरान प्रभावित करता रहेगा और इस प्रकार, यह लगातार कार्रवाई का कारण बनेगा।

14. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने अपनी दलीलों के समर्थन में निम्नलिखित निर्णय पर

भरोसा जताया है: -

क) **दिल्ली नगर निगम बनाम गुरनाम कौर, (1989) 1 एससीसी 101 में प्रकाशित।**

ख) **उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड एवं अन्य, (1991) 4 एससीसी 139 में प्रकाशित।**

ग) **ए-वन ग्रेनाइट्स बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य।, (2001) 3 एससीसी 537 में प्रकाशित।**

घ) **इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा डी.बी.सिविल रिट याचिका संख्या 7568/2012 [राजस्थान समयोजीत शिक्षा कर्मी कल्याण सोसायटी बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य] में पारित निर्णय दिनांक 01.02.2018।**

15. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री प्रखर गुप्ता ने निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किए हैं:-

15क. 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5 (iv) की शक्तियों को **प्रेम प्रकाश पुरोहित** (सुप्रा.) के मामले में इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा पहले ही बरकरार रखा जा चुका है और इस तरह, उसी मुद्दे को पहले दोबारा खोलने की अनुमति नहीं दी जा सकती है तथा यह न्यायालय और याचिकाकर्ता इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा दिए गए निर्णय से आबाध्यकर हैं।

15ख. इस न्यायालय की प्रधान सीट, जोधपुर की समन्वय पीठ द्वारा **खंडपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 7568/2012 में राजस्थान समयोजित शिक्षा करणी कल्याण सोसायटी बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य** शीर्षक से पारित निर्णय की पहले ही समीक्षा की जा चुकी है और पुन:स्मरण किया गया है।

15ग. याचिकाकर्ता को 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5 (iv) के अधिकार को चुनौती देने से रोका गया है क्योंकि आरवीआरईएस के तहत नियुक्ति वैकल्पिक थी और किसी भी कर्मचारी को आरवीआरईएस के नियमों के तहत नियुक्ति लेने के लिए मजबूर विवश नहीं किया गया था। याचिकाकर्ता ने अपनी इच्छा से विकल्प फॉर्म में अपनी पसंद दी थी और आरवीआरईएस नियम 2010 के नियम 5 (xi) के अनुसार, एक गैर-न्यायिक स्टांप पेपर पर एक वचन पत्र भी प्रस्तुत किया था।

15घ. **प्रेम प्रकाश पुरोहित** (सुप्रा.) के मामले में निर्धारित कानून से बाहर निकलने के लिए

चुप्पी का सिद्धांत, मामले के वर्तमान तथ्यों में लागू नहीं है।

15ड.. **प्रेम प्रकाश पुरोहित** (सुप्रा.) के मामले में इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा पारित निर्णय एक बाध्यकारी मिसाल होगा और याचिकाकर्ता के लिए विद्वान वकील का तर्क कि वर्तमान याचिका में उनके द्वारा उठाया गया तर्क पूर्व फैसले के समय नहीं उठाया गया था, उस पर तर्क नहीं दिए गए तहे उसकी जांच भी नहीं की गई थी, पूरी तरह से बिना किसी तथ्य के है और किसी फैसले की बाध्यकारी मिसाल को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है या इसका महत्व केवल इस तथ्य के कारण नहीं खोया जा सकता है कि अब वर्तमान नियम, जिसे बरकरार रखा गया है, को चुनौती देने के लिए वकील द्वारा या उसकी नवीन पद्धति के माध्यम से तर्क अलग तरीके से उठाए जा रहे हैं और यह इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा पारित आदेश पर दोबारा विचार करने का आधार नहीं हो सकता है।

15च. रसायन विज्ञान में व्याख्याता का पद एक गैर-स्वीकृत पद था और एक बार जब उक्त पद 1993 के नियमों के नियम 17 के अनुसार स्वीकृत हो गया, तो राज्य ने 1993 के नियमों के नियम 13 और 14 के निबंधनों के अनुसार आनुपातिक बोझ उठाना शुरू कर दिया था और इस प्रकार, 1998 से पहले, याचिकाकर्ता की सेवा शर्तें, राज्य सरकार के दायरे में नहीं आती थीं और भले ही सहायताप्राप्त संस्थान ने 1993 के नियम 14 के निबंधनों के अनुसार अपने अधिकार से अधिक अनुदान लिया हो, याचिकाकर्ता द्वारा की गई सेवाओं की अवधि को उसकी प्रारंभिक नियुक्ति की तारीख से गिनते हुए, अब याचिकाकर्ता इसका लाभ प्रदान नहीं किया जा सकता है।

15छ. याचिकाकर्ता द्वारा दायर रिट याचिका सरासर न्यायिक प्रक्रिया का दुरुपयोग है। याचिकाकर्ता को, यदि अपनी सेवा शर्तों के संबंध में कोई शिकायत थी, तो उसे 2010 के आरवीआरईएस नियमों के दायरे में आने का विकल्प देते समय सतर्क रहना चाहिए था। याचिकाकर्ता ने खुली आंखों से और अपने सेवा करियर की पूरी समझ के साथ मांग की थी उसे 2010 के आरवीआरईएस नियमों में निर्धारित नियमों और शर्तों के तहत लाभ प्राप्त हों, और उसे अब दोनों स्थितियों में एक साथ लाभ प्राप्त करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

15ज. याचिकाकर्ता एक सुशिक्षित व्यक्ति है, जो व्याख्याता के पद पर था और यह नहीं माना जा सकता कि उसे आरवीआरईएस नियम 2010 में निर्धारित शर्तों को चुनने के

बाद होने वाले परिणामों के बारे में जानकारी नहीं थी।

15झ. याचिकाकर्ता का वेतन दिनांक 21.02.2011 को आदेश जारी करके संशोधित किया गया था और याचिकाकर्ता ने आठ साल की लंबी अवधि के लिए वरिष्ठ और चयन वेतनमान में अपने वेतन के संशोधन को स्वीकार किया था और अगस्त, 2019 में दायर याचिका न केवल न्यायिक प्रक्रिया का दुरुपयोग है लेकिन इसे देरी और ढिलाई के आधार पर खारिज करना भी आवश्यक है।

15ञ. याचिकाकर्ता द्वारा दायर की गई वर्तमान रिट याचिका, 2010 के आरवीआरईएस नियमों के अधिकार को जानने के बावजूद, बरकरार रखी गई है और याचिकाकर्ता द्वारा परिणामी आदेश को काफी अवधि के लिए स्वीकार किया जा रहा है, इसलिए, भारी खर्चों के अधिरोपण के साथ खारिज किए जाने योग्य है।

16. हमने पक्षों के विद्वान वकीलों को सुना है और उनकी सहायता से रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री का अवलोकन किया है।

17. इस न्यायालय ने पाया कि रिट याचिका में उठाए गए निम्नलिखित महत्वपूर्ण मुद्दों पर निर्णय की आवश्यकता है:-

(i) क्या यूजीसी द्वारा सीएएस लाभ प्रदान करना भेदभावपूर्ण होने के कारण 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5 (iv) के विपरीत है, और कर्मचारी के निहित अधिकार को छीन रहा है।

(ii) क्या प्रेम प्रकाश पुरोहित (सुप्रा.) के मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित निर्णय मौन धारण करते हुए पारित निर्णय है और उक्त निर्णय मिसाल के नियम का अपवाद है और इस प्रकार इसके लिए नए निर्णय की आवश्यकता है, जबकि इन्हें न्यायालय ने 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5(iV) को अधिकारेतर के रूप में बरकरार रखा है।

(iii) क्या उस कर्मचारी को, जिसने वचन पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं और नए सेवा नियमों अर्थात 2010 के आरवीआरईएस नियमों में आमेलन/नियुक्ति का लाभ उठाया है, कुछ शर्तों का उल्लंघन करने की अनुमति दी जा सकती है और वह नियमों के एक हिस्से का लाभ उठाकर एक साथ कई फायदे ले सकता है और नियमों के दूसरे भाग को चुनौती देते हुए यह कह सकता है कि यह उनके मौलिक

अधिकारों का अपमान है।

(iv) क्या कोई कर्मचारी, लाभ स्वीकार करने के बाद, अत्यधिक देरी के बाद सेवा शर्तों से संबंधित नियमों के उल्लंघन को चुनौती देने वाली रिट याचिका दायर कर सकता है और वह भी 2010 के आरवीआरईएस नियमों की वैधता को बरकरार रखने के बाद, जिसका लाभ उसके द्वारा साल 2011 में ही लिया गया है।

18. इस न्यायालय ने पाया कि याचिकाकर्ता द्वारा उठाई गई पहली शिकायत यूजीसी द्वारा याचिकाकर्ता के पक्ष में उसकी व्याख्याता के पद पर नियुक्ति की प्रारंभिक तिथि को 19.01.1993 से मानते हुए सीएएस का लाभ देने और 19.01.1998 से वरिष्ठ वेतनमान प्रदान करने और 19.01.2003 से चयन वेतनमान का अतिरिक्त लाभ देने से संबंधित है, जो 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5(iv) के संचालन के कारण विरोधाभासी है। इस न्यायालय ने पाया कि सीएएस को यूजीसी द्वारा पात्रता शर्तें प्रदान करके पेश किया गया है। याचिकाकर्ता के मामले को उसके पूर्व नियोक्ता द्वारा यूजीसी दिशानिर्देशों के अनुसार निपटाया गया था और तदनुसार गैर-स्वीकृत पद पर काम करते हुए भी उसे लाभ दिया गया था।

19. इस न्यायालय ने पाया कि राज्य सरकार ने 2010 के आरवीआरईएस नियमों को पेश करते समय स्पष्ट रूप से प्रावधान किया था कि सीएएस के लाभों को स्वीकृत पद के विरुद्ध किसी व्यक्ति/कर्मचारी की नियुक्ति की तारीख से गिना जाएगा। राज्य सरकार का उक्त निर्णय किसी भी तरह से यूजीसी योजना के विपरीत नहीं हो सकता। राज्य सरकार द्वारा सीएएस के अनुदान के लिए अलग-अलग आधार की आवश्यकता होती है और इस तरह यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि यूजीसी द्वारा पेश किए गए केंद्रीय कानून का राज्य सरकार द्वारा उल्लंघन किया गया है। यह न्यायालय पाता है कि राज्य सरकार स्वीकृत पदों पर अनुदान सहायता प्रदान करने के लिए संस्थानों के प्रति उत्तरदायी है और यदि गैर-स्वीकृत पद के विरुद्ध, निजी प्रबंधन ने एक विशेष संख्या में व्यक्तियों को नियोजित किया है, तो राज्य सरकार से किसी भी समय यह अपेक्षित नहीं है कि वह उनका खर्च वहन करे या समतुल्य अनुदान सहायता प्रदान करे।

याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की दलील है कि एक बार पूर्ववर्ती यूजीसी योजना के तहत लाभ बढ़ाया गया था और उसे वापस नहीं लिया जा सकता था या याचिकाकर्ता के अधिकारों के लिए हानिकारक निर्णय नहीं लिया जा सकता था, इस न्यायालय ने पाया कि कर्मचारी/याचिकाकर्ता को, यदि नए सेवा नियमों के तहत शामिल होने का विकल्प दिया

गया है, तो ऐसे लाभ, यदि कोई हो, जो पहले दिए गए थे, उन्हें आगे नहीं बढ़ाया जा सकता था, जैसा कि अनुरोध किया गया है।

20. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील की दलील है कि 2010 के आरवीआरईएस नियमों का नियम 5 (iv) भेदभावपूर्ण है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है, क्योंकि यह केवल उन कर्मचारियों पर लागू होता है, जो सरकारी सेवा में शामिल हुए हैं और यह उनके संबंधित पूर्ववर्ती गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थानों के साथ काम करने वाले कर्मचारियों पर लागू नहीं होता है और इस तरह, समान रूप से स्थित व्यक्तियों के बीच एक अनुचित द्वंद्व विद्यमान है, इस न्यायालय ने पाया कि 2010 के आरवीआरईएस नियम राज्य सरकार द्वारा सहायता प्राप्त संस्थानों में काम करने वाले कर्मचारियों के समग्र कल्याण को ध्यान में रखते हुए और उन्हें सरकारी शैक्षणिक संस्थानों में काम करने वाले अन्य सरकारी कर्मचारियों के बराबर लाने के लिए प्रख्यापित किए गए थे, अत: यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि राज्य सरकार ने समान स्थिति वाले व्यक्तियों के बीच दो वर्ग बनाए हैं।

21. इस न्यायालय ने आगे पाया कि 2010 के आरवीआरईएस नियमों ने गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थानों में काम करने वाले सभी कर्मचारियों के स्वचालित आमेलन/नियुक्ति/स्थानांतरण की शुरुआत नहीं की थी। इसके विपरीत, उक्त नियम वैकल्पिक थे और केवल वे कर्मचारी जिन्होंने 2010 के आरवीआरईएस नियमों के तहत शामिल होने का विकल्प दिया था, ऐसे कर्मचारियों और उनकी सेवा शर्तों को ही नए नियमों द्वारा विनियमित किया गया था।

यह न्यायालय याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की इस दलील को स्वीकार नहीं कर सकता है कि 2010 के आरवीआरईएस नियमों की शुरूआत से समान स्थिति वाले व्यक्तियों के खिलाफ शत्रुतापूर्ण भेदभाव किया गया है। राज्य सरकार ने अपने अधिकारों के तहत उन कर्मचारियों के बीच एक वैध वर्गीकरण किया है, जो अपने पुराने संस्थानों के साथ लाभ जारी रखना चाहते थे और वे कर्मचारी, जो नई सेवा नियमों के तहत शामिल होना चाहते थे और इस तरह, राज्य एक मॉडल नियोक्ता है, यदि ऐसे कर्मचारियों के पक्ष में दर्जा और अन्य लाभ प्रदान करने का निर्णय लिया गया, इस न्यायालय द्वारा भेदभाव या मनमानी का कोई भी आरोप स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

22. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की यह दलील कि 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5(iv), जो यूजीसी वेतनमान देने के लिए पात्रता निर्धारित करते हैं, राज्य सरकार

की विधायी क्षमता से परे है, इस न्यायालय ने पाया कि ऐसी दलील बिल्कुल निराधार है और औचित्यपूर्ण नहीं है। इस न्यायालय ने पाया कि यूजीसी वेतनमान, जो यूजीसी द्वारा निर्धारित किया गया है, पात्रता की शर्तें प्रदान करता है और राज्य सरकार ने ऐसी पात्रता के साथ छेड़छाड़ नहीं की है और कर्मचारियों को 2010 के आरवीआरईएस नियमों के दायरे में लाते समय, राज्य सरकार ने निर्णय लिया गया कि सीएएस के लाभ पर विचार करते समय गैर-स्वीकृत पद के विरुद्ध प्रदान की गई सेवाओं को ध्यान में नहीं रखा जा सकता है।

इस न्यायालय ने पाया कि राज्य सरकार के पास 2010 के आरवीआरईएस नियम और उस पूरे कैडर को लागू करने की पूरी क्षमता थी, जिसे नए नियमों यानी 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियंत्रण में आना था, यदि उसे अधिकार प्रदान किए गए थे, अतः यह आरोप नहीं लगाया जा सकता है विधायी योग्यता के बिना इन्हें पेश किया गया है।

23. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की दलील है कि प्रासंगिक समय पर पूर्ववर्ती कानून के प्रावधानों के तहत जो लाभ स्वीकृत किए गए थे, उन्हें पूर्वव्यापी प्रभाव से मनमाने ढंग से अस्वीकार नहीं किया जा सकता था, इस न्यायालय ने पाया कि 2010 के आरवीआरईएस नियमों के अधिनियमन से पहले, गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थानों/सहायताप्राप्त संस्थानों में कार्यरत कर्मचारियों की सेवा शर्तों को अलग-अलग सेवा नियमों द्वारा विनियमित किया गया था और यदि 2010 के आरवीआरईएस नियमों के लागू होने से कर्मचारियों की पात्रता तय की जानी थी, तो ऐसा नहीं कहा जा सकता है पूर्वव्यापी प्रभाव से लाभ छीना जा रहा है।

जिन कर्मचारियों ने आरवीआरईएस नियम 2010 के तहत नियुक्ति का विकल्प दिया था, उन्हें उनकी सेवा शर्तों के संबंध में लाभ दिया गया है। तथापि, किसी कर्मचारी के लिए गैर-स्वीकृत पद पर काम करते समय राज्य सरकार से पूर्ण लाभ देकर उक्त सेवा को ध्यान में रखने के लिए कहने का कोई वैध औचित्य नहीं हो सकता है।

24. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता की दलील थी कि 1993 के पूर्ववर्ती नियमों के नियम 2(ग) में संलग्न स्पष्टीकरण में प्रावधान किया गया है कि सहायताप्राप्त संस्थान में काम करने वाले किसी भी कर्मचारी को यूजीसी वेतनमान का लाभ दिया जाना आवश्यक है, भले ही वह विशेष पद स्वीकृत न हो और अनुदान सहायता प्राप्त कर रहा हो, इस न्यायालय ने पाया कि यदि याचिकाकर्ता को उस पद, जिस पर उसे नियुक्त किया गया था, के लिए सहायतानुदान नहीं मिलने के संबंध में कोई शिकायत थी और यदि उक्त पद बाद में स्वीकृत कर दिया गया था, तो याचिकाकर्ता को प्रासंगिक समय पर अपनी शिकायत उठानी चाहिए

थी, लेकिन पिछले नियोक्ता के साथ गैर-स्वीकृत पद पर बने रहने के बाद, वर्ष 2011 में ही उसके आमेलन के बाद, उसे ऐसी शिकायत उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। नए नियमों में याचिकाकर्ता की नियुक्ति के समय, नियोक्ता या राज्य द्वारा इस तरह के तुच्छ दावे को अनुमति देने में अब बहुत विलंब हो चुका है।

25. याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क कि प्रेम प्रकाश पुरोहित (सुप्रा.) के मामले में खंडपीठ द्वारा पारित पहले के फैसले को कई आधारों पर चुनौती नहीं दी गई थी, जो वर्तमान याचिका में उठाए गए हैं और वर्तमान याचिका में प्रासंगिक तर्क और दलीलें भी दी गई हैं, जिन पर न्यायालय द्वारा कोई विचार/चर्चा या निष्कर्ष नहीं किया गया है, इसलिए उक्त निर्णय एक बाध्यकारी मिसाल नहीं हो सकता है और पहले का निर्णय मौन रूप में पारित किया गया है, इस न्यायालय ने पाया कि प्रेम प्रकाश पुरोहित (सुप्रा.) के मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ ने न्यायालय के समक्ष उठाए गए सभी अनुरोधों पर विचार किया था और न्यायालय ने तदनुसार उक्त निर्णय पारित किया था।

26. इस न्यायालय द्वारा पहले *'मौन रहते हुए'* पारित किए गए निर्णय के सिद्धांत को खारिज किए जाने के अनुरोध को नोट कर लिया गया है। इस न्यायालय का मानना है कि कोई भी वादी, जो रिट याचिका दायर करता है और अधिनियम की शक्तियों को चुनौती देता है तथा पक्षकारों के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए सभी आधारों और सभी प्रस्तुतियों पर विचार करने के बाद, यदि न्यायालय कोई निर्णय देता है, तो कथित तौर पर नए आधार उठाकर अगली याचिका दायर करना, पहले के फैसले को मौन रहते हुए पारित किया गया नहीं माना जा सकता।

27. इस न्यायालय का मानना है कि यदि याचिकाकर्ता के अधिवक्ता की याचिका को अनुमति दी जाएगी, तो इसके परिणामस्वरूप अदालत की कार्यवाही में पूरी तरह से अनिश्चितता और अराजकता पैदा हो जाएगी, क्योंकि अलग-अलग मंचों पर, अलग-अलग समय पर, अलग-अलग वादियों द्वारा और अलग-अलग वकीलों द्वारा समान प्रावधानों को चुनौती देने के कारण निर्णय की अंतिमता कभी हासिल नहीं होगी। उक्त प्रयास इस मुद्दे को बार-बार उछालने का एक प्रयास होगा और इस तरह, न्याय प्रदान करने की हमारी भारतीय प्रणाली में, सामान्य कानून में, 'मिसाल के नियम' का सिद्धांत पीछे रह जाएगा और यदि इस तरह के दुस्साहस और अति उत्साह का उपयोग करने की वादियों और उनकी ओर से पेश होने वाले अधिवक्ताओं को अनुमति दी जाती है, तो इसके परिणामस्वरूप ऐसे एक ही विषय

पर मुकदमेबाजी की बहुलता होगी जिसे संवैधानिक न्यायालयों में अंतिम रूप से प्राप्त हो चुका है।

28. यह न्यायालय, इस मुद्दे पर विचार करने के लिए कि क्या *मौन रहना* भारत के संविधान के अनुच्छेद 141 का अपवाद है, **गुजरात राज्य बनाम आर.ए. मेहता, (2013) 3 एससीसी 1** में प्रकाशित, के मामले में शीर्ष न्यायालय द्वारा तय किए गए मामले को संदर्भित करना उचित समझता है जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 61 पर निम्नानुसार व्यवस्था दी है:-

> "61. स्थापित कानूनी प्रस्ताव के संबंध में कोई विवाद नहीं हो सकता है कि इस न्यायालय का निर्णय बाध्यकारी है, खासकर जब वह समन्वित खंडपीठ या वृहद खंडपीठ का हो। यह कहना भी सही है कि भले ही कोई विशेष मुद्दा पहले नहीं उठाया गया हो या कोई विशेष तर्क दिया गया हो लेकिन उस पर विचार नहीं किया गया हो, तो भी वह निर्णय अपना बाध्यकारी प्रभाव नहीं खोता है, बशर्ते कि उस तथ्य पर, जिसके संदर्भ में बाद में तर्क दिया गया हो, वस्तुतः निर्णय ले लिया गया है। इसलिए, निर्णय अपना अधिकार "केवल इसलिए नहीं खोएगा कि उस पर असंगत तर्क दिया गया, अपर्याप्त रूप से विचार किया गया या गलत तरीके से तर्क दिया गया"। मामले पर उसी के अनुपात निर्णय को ध्यान में रखते हुए विचार किया जाना चाहिए अर्थात सामान्य कारण या सामान्य आधार जिस पर अदालत का निर्णय आधारित है, या विशेष मामले की निर्दिष्ट विशिष्टताओं से परीक्षण या सार के आधार पर, जो अंततः निर्णय को जन्म देता है।"

29. इस न्यायालय ने पाया है कि 'मिसाल के कानून' के संबंध में, वृहद खंडपीठों के अनुपात और उच्च न्यायालयों के निर्णय, केवल नए या अभिनव तर्क उठाने के लिए अधिवक्ता की पटुता के उलझाव से निकलने पर आधारित थे, जिन्हें पहले नहीं उठाया गया था या जिन पर विचार नहीं किया गया था और यदि इस तरह के आदेशों को इन आधारों पर खारिज कर दिया जाएगा तो बाध्यकारी मिसाल की अंतिमता एक मृगतृष्णा और असंभव स्थिति मात्र बनकर रह जाएगी।

30. याचिकाकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता की दलील कि 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5 (xi) के तहत याचिकाकर्ता द्वारा दिए गए वचन को 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5 (iv) की वैधता पर प्रश्नचिह्न उठाने से नहीं रोका जा सकता है, क्योंकि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 19(1)(छ) का उल्लंघन होगा, इस न्यायालय ने पाया कि याचिकाकर्ता ने 2010 के आरवीआरईएस नियमों के नियम 5(xi) के तहत एक वचन-पत्र प्रस्तुत किया है और सभी लाभ हासिल कर लिए हैं, अतः वह उसके द्वारा दिए

गए वचन से बंधा रहेगा और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 19(1)(छ) का इससे कोई उल्लंघन नहीं हो सकता है, जैसा कि याचिकाकर्ता ने आरोप लगाया है। इस न्यायालय का मानना है कि जो व्यक्ति स्वेच्छा से नई सेवा में शामिल होने का विकल्प चुनता है और वचन देता है और लाभकारी कानून का लाभ लेता है, उसे पलट कर यह कहने की अनुमति नहीं दी जा सकती कि उसके द्वारा दिया गया वचन उसके लिए बाध्यकारी नहीं होगा।

31. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील की दलील है कि चूंकि आक्षेपित आदेश 21.02.2011 को पारित किया गया था और याचिका दायर करने में कोई देरी नहीं हुई है क्योंकि सीएएस और वरिष्ठ वेतनमान के लाभ से इनकार करना लगातार कार्रवाई का कारण बनता है, लेकिन न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ता के वकील द्वारा पेश की गई ऐसी निराधार दलील को स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

इस न्यायालय ने पाया कि दिनांक 21.02.2011 का आदेश याचिकाकर्ता के कुछ अधिकारों को निर्धारित करते हुए पारित किया गया था और वह लगभग आठ वर्षों तक 2010 के नए आरवीआरईएस नियमों द्वारा शासित होता रहा और उसने 26.08.2019 को रिट याचिका दायर की। याचिकाकर्ता को कार्रवाई का कारण, यदि कोई हो, आदेश पारित होने के समय या 2010 के नए आरवीआरईएस नियमों के तहत उसकी नियुक्ति के तुरंत बाद मिल गया था। लेकिन याचिकाकर्ता ने आठ साल बाद यह कार्रवाई के और वर्तमान याचिका पूरी तरह से विलंबग्रस्त और खामियों से भरी है, तथा इस प्रकार उत्तरदाताओं द्वारा उठाई गई आपत्ति पूरी तरह से वैध है। यह न्यायालय यह अवलोकन करने के लिए बाध्य है कि प्रेम प्रकाश पुरोहित (सुप्रा.) के मामले में खंडपीठ द्वारा निर्णय 25.01.2018 को पारित किया गया था और उक्त निर्णय को अंतिम रूप दिया गया था और इसे शीर्ष न्यायालय द्वारा रद्द नहीं किया गया था और इस तरह, याचिकाकर्ता या उस मामले के लिए किसी अन्य कर्मचारी को, जो पहले एक गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थान में काम कर रहा था और जिसे बाद में 2010 के आरवीआरईएस नियमों के तहत नियुक्त किया गया था, इस न्यायालय के समक्ष यह दलील देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है कि कोई कर्मचारी वर्ष 2010 में लागू किए गए प्रावधानों के खिलाफ जिस भी समय व्यथित महसूस करेगा, तो उसके द्वारा अदालत का दरवाजा खटखटाए जाने के लिए कार्रवाई का कारण उसी समय उत्पन्न होगा।

32. यह न्यायालय उत्तरदाताओं के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए निवेदन में तथ्य पाता है कि राज्य सरकार ने 1993 के नियमों के नियम 17 के अनुसार पद स्वीकृत कर दिया था और

1993 के नियमों के नियम 13 और 14 के अनुसार आनुपातिक रूप से भुगतान करना शुरू कर दिया था हालांकि 1998 से पहले याचिकाकर्ता की सेवा शर्तें राज्य सरकार के विचार का विषय नहीं थीं।

33. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने **दिल्ली नगर निगम बनाम गुरनाम कौर** (सुप्रा.) के मामले में शीर्ष अदालत द्वारा पारित फैसले पर भरोसा जताया है। इस न्यायालय ने पाया कि उक्त मामले में शीर्ष न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दायर एक रिट याचिका में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों पर विचार कर रहा था। शीर्ष न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत शीर्ष अदालत में दायर पहले की रिट याचिका के तथ्य पर गौर किया और वहां पक्षकारों की सहमति के आधार पर, पक्षकारों के अधिकारों पर निर्णय किए बिना, शीर्ष अदालत ने गुण-दोष पर निर्णय किए बिना पक्षकारों की सहमति से आदेश जारी किया।

दिल्ली उच्च न्यायालय ने **जमना दास बनाम दिल्ली प्रशासन (रिट याचिका संख्या 981-82/1984)** मामले में शीर्ष न्यायालय द्वारा पारित आदेश का पालन किया जिस पर शीर्ष न्यायालय द्वारा निर्णय लिया गया और ऐसी पृष्ठभूमि में, शीर्ष न्यायालय ने माना कि चूंकि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पिछला निर्णय सहमति के आधार पर पारित किया गया था और उक्त निर्णय को *पर इंक्यूरियम* माना जाना था, क्योंकि **जमना दास** का मामला बिना बहस के, अधिनियम के प्रासंगिक प्रावधानों के संदर्भ के बिना सुनाया गया था और इस तरह, दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय को बरकरार नहीं रखा गया था, क्योंकि यह एक गलत सिद्धांत पर पारित किया गया था और यह *सब साइलेन्टियो* में पारित किया गया।

इस न्यायालय ने पाया कि पैरा-11 में उक्त फैसले में, सर्वोच्च न्यायालय ने न्यायशास्त्र पर सैल्मंड की पुस्तक का हवाला देते हुए, *सब साइलेंटियो* की अवधारणा का उल्लेख किया था। इस न्यायालय ने पाया कि उक्त निर्णय याचिकाकर्ता के अधिवक्ता की बहुत कम सहायता है।

34. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने **यूपी राज्य एवं अन्य बनाम सिंथेटिक्स एंड केमिकल्स लिमिटेड एवं अन्य** (सुप्रा.) के मामले में शीर्ष न्यायालय द्वारा पारित फैसले पर भरोसा जताया है, इस न्यायालय ने पाया कि उक्त मामले में शीर्ष न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 141 के साथ-साथ *अनवधानता* और *मौन रहते हुए* के सिद्धांतों पर विचार किया

और पाया कि ये दोनों सिद्धांत मिसाल के नियम के अपवाद के रूप में काम करते हैं। शीर्ष अदालत ने आगे पाया कि कोई भी निर्णय जो व्यक्त नहीं किया गया है और कारणों पर आधारित नहीं है और न ही मुद्दे पर विचार करके आगे बढ़ाया गया है, उसे 'कानून घोषित' नहीं माना जा सकता है।

इस न्यायालय ने यह देखा कि उक्त निर्णय ने फिर से मिसाल के नियम के अपवाद को दोहराया और पाया कि कोई निर्णय तकनीकी अर्थों में तब मौन रहते हुए पारित किया जाता है, जब निर्णय में शामिल कानून के विशेष बिंदु को न्यायालय द्वारा नहीं माना जाता है या उसके ध्यान में नहीं लाया जाता है। **शीर्ष अदालत ने आगे पाया कि दिल्ली नगर निगम बनाम गुरनाम कौर** (सुप्रा.) के मामले ने भी इसी तरह का मुद्दा उठाया। याचिकाकर्ता के वकील ने जिस फैसले पर भरोसा किया उससे याचिकाकर्ता के वकील को कोई मदद नहीं मिली।

35. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने **ए-वन ग्रेनाइट बनाम राज्य यूपी एवं अन्य** (सुप्रा.) के मामले में शीर्ष न्यायालय द्वारा पारित फैसले पर भरोसा जताया है। इस न्यायालय ने पाया है कि उक्त मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने पाया है कि यदि नियमों की प्रयोज्यता के संबंध में प्रश्न का उल्लेख पहले की अपीलों में न्यायालय द्वारा बहुत कम किया गया है, तो यह नहीं कहा जा सकता है कि मुद्दा उसी के द्वारा समाप्त हो गया है और यह अब पुनः एकीकृत नहीं रह गया है। इस न्यायालय ने पाया कि सर्वोच्च न्यायालय ने उक्त फैसले में **प्रेम नाथ शर्मा बनाम यूपी राज्य, (1997) 4 एससीसी** 552 में प्रकाशित, के मामले में उसके द्वारा पारित पहले के फैसले पर विचार किया और पाया कि मुकदमेबाजी के पहले दौर में, यूपी लघु खनिज (रियायत) नियम, 1963 के नियम 72 की प्रयोज्यता को शीर्ष न्यायालय के समक्ष प्रचारित नहीं किया गया था और इसकी प्रयोज्यता को भी सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष रखा गया था और इस प्रकार, सर्वोच्च न्यायालय ने मामले पर नये सिरे से निर्णय लिया। याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने जिस निर्णय पर भरोसा किया, उसकी वर्तमान मामले के तथ्यों में कोई प्रासंगिकता नहीं है।

36. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने **खंडपीठ सिविल रिट याचिका संख्या** 7568/2012 **(राजस्थान समयोजीत शिक्षाकर्मी कल्याण सोसायटी बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य)** में इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा पारित दिनांक 01.02.2018 के फैसले पर भरोसा जताया है। इस न्यायालय ने पाया कि डी.बी. समीक्षा याचिका (रिट) संख्या 25/2019

[राजस्थान राज्य एवं अन्य बनाम रामगोपाल वर्मा और अन्य] और अन्य संबंधित समीक्षा याचिकाएं दिनांक 01.02.2018 के आदेश के खिलाफ दायर की गईं और प्रधान खंडपीठ, जोधपुर की खंडपीठ ने 20.09.2021 को एक आदेश पारित किया और समीक्षा याचिकाओं को अनुमति दी। रिट याचिकाओं को उनकी मूल संख्या में बहाल कर दिया गया और उत्तरदाताओं-रिट याचिकाकर्ताओं को राजस्थान स्वैच्छिक ग्रामीण शिक्षा सेवा (द्वितीय संशोधन) नियम, 2012 द्वारा प्रतिस्थापित आरवीआरईएस नियम 2010 के नियम 5 (ix) को चुनौती देने के लिए अपनी रिट याचिकाओं में संशोधन करने की अनुमति दी गई।

इस न्यायालय को यह भी सूचित किया गया है कि दिनांक 20.09.2021 की समीक्षा याचिकाओं में पारित आदेश को एसएलपी दायर करके सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई है और आदेश दिनांक 14.02.2022 के माध्यम से, दिनांक 20.09.2021 के समीक्षा आदेश पर शीर्ष न्यायालय द्वारा रोक लगा दी गई है।

इस न्यायालय का मानना है कि याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने जिस फैसले पर भरोसा किया और उसके बाद शीर्ष अदालत के समक्ष लंबित मुकदमे का वर्तमान मामले पर कोई असर नहीं पड़ेगा।

37. इस न्यायालय ने पाया कि वर्तमान रिट याचिका में योग्यता नहीं है और इस प्रकार, इसे खारिज कर दिया जाता है।

(आशुतोष कुमार), न्यायमूर्ति **(अशोक कुमार गौड़), न्यायमूर्ति**

Solanki DS, PS

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल, द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।
अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।